

जनजातीय कृषि संस्कृति और पारंपरिक खेती तकनीकों का संरक्षण

संदीप चौहान व योगेश कुमार

कृषि विज्ञान केन्द्र, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय अमरकंटक

भारत की जनजातीय समाज प्रकृति से गहरे जुड़े होने के कारण एक समृद्ध कृषि संस्कृति का संवाहक है। इनके पारंपरिक कृषि ज्ञान में पर्यावरण संरक्षण, जैव विविधता, सामूहिक श्रम, स्थानीय संसाधनों का उपयोग और टिकाऊ जीवनशैली की अनूठी झलक देखने को मिलती है। बदलते कृषि परिदृश्य में यह आवश्यक है कि इस अमूल्य कृषि विरासत को संरक्षित कर अगली पीढ़ियों तक पहुँचाया जाए।

जनजातीय कृषि संस्कृति में पर्यावरण के अनुकूल और टिकाऊ पद्धतियाँ शामिल हैं, जैसे कि प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण, मिश्रित फसलें, और फसल चक्र। यह पारंपरिक ज्ञान, जो अक्सर परिवार-आधारित होता है, स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार विकसित हुआ है और इसमें मोटे अनाज जैसे ज्वार और बाजरा उगाना शामिल है। यद्यपि कुछ प्रथाएँ अभी भी मौजूद हैं, फिर भी उन्हें आधुनिक चुनौतियों, जैसे कि जलवायु परिवर्तन और बाजार की कमी से निपटने के लिए नई रणनीतियों की आवश्यकता है।

भारत की जनजातीय समुदायों की कृषि परंपराएँ सदियों पुरानी हैं। ये परंपराएँ न केवल खेती का तरीका बताती हैं, बल्कि प्रकृति के साथ उनके संतुलित संबंध,

सामाजिक संरचना, विश्वास प्रणाली और जीवन दर्शन को भी दर्शाती हैं। जनजातीय कृषि संस्कृति आज भी जैव विविधता संरक्षण, प्राकृतिक खेती और सतत विकास के उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है।

जनजातीय कृषि संस्कृति-

- प्रकृति के नियमों के अनुरूप
 - पर्यावरण-अनुकूल
 - सामुदायिक जीवन पर आधारित
 - स्थानीय संसाधनों की उपयोगिता बढ़ाने वाली
 - जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीली है
- इनकी खेती केवल उत्पादन नहीं बल्कि जीवन-शैली और परंपरा का हिस्सा है।

प्रमुख पारंपरिक खेती तकनीकें व कृषि संस्कृति

प्रकृति आधारित खेती

जनजातीय लोग भूमि, जल, जंगल और जीव-जंतुओं को *जीवित इकाई* मानते हैं। उनकी खेती पूरी तरह प्रकृति के चक्रों—बरसात, हवा, सूर्य, मिट्टी की नमी—पर आधारित रहती है।

- वे रासायनिक खादों पर कम निर्भर होते हैं।

- बीज संरक्षण और उर्वरक के लिए गोबर, पतियाँ, लकड़ी की राख आदि का उपयोग करते हैं।

पारंपरिक मिश्रित खेती

जनजातीय खेती में एक साथ कई फसलों की बुवाई आम है। जैसे-ज्वार, मक्का, तूर, कद्दू, ककड़ी, अरहर आदि को एक ही खेत में लगाया जाता है।

लाभ:

- मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है
- कीट-रोग नियंत्रण स्वाभाविक रूप से होता है
- परिवार को विविध आहार मिलता है
- जलवायु जोखिम कम होता है

देसी बीजों का संरक्षण

जनजातीय महिलाएँ विशेषकर बीज संरक्षण की विशेषज्ञ होती हैं। वे-

- मिट्टी के घड़े, बाँस की टोकरी, राख या नीम पत्ती में बीज सुरक्षित रखती हैं
- बीजों का आदान-प्रदान कर जैव विविधता को सुरक्षित रखती हैं



यह परंपरा बीज स्वराज का बेहतरीन उदाहरण है।

जनजातीय किसान स्थानीय बीजों को राख, नीम की पत्ती, तेल, गोबर के लेप का उपयोग करके सुरक्षित रखते हैं। इनसे बिना रसायन के सुरक्षित बीज भंडारण संभव होता है।

जैविक और प्राकृतिक खेती

गोबर खाद

पत्ती खाद

इनके प्रयोग से मिट्टी की उर्वरकता दीर्घकाल तक बनी रहती है।

पारंपरिक फसलें

जनजातीय समुदायों ने सदियों से कोदो, कुटकी, कुट्टू, झंगोरा, लाल चावल, देसी मक्का, देसी दालें जैसी पौष्टिक और जलवायु-अनुकूल किस्मों को संरक्षित किया है। ये फसलें जलवायु परिवर्तन के समय भी बेहतर प्रदर्शन करती हैं।



जल संरक्षण की पद्धतियाँ

चेक डैम, छोटे बंधान, झिरिया, पहाड़ी नालों का उपयोग-ये सभी जल संरक्षण के बेहतरीन मॉडल आज भी जनजातीय इलाकों में देखे जा सकते हैं।

मौसम पूर्वानुमान का स्थानीय ज्ञान

पक्षियों की उड़ान, हवा की दिशा, बादलों का रूप, कीड़ों की गतिविधि-इनसे मौसम का

अनुमान लगाने का ज्ञान वर्षों से पीढ़ियों में सुरक्षित है।

पारंपरिक कृषि तकनीकों के संरक्षण में जनजातीय किसानों की भूमिका

बीज विविधता की रक्षा – देसी बीजों को जीवित रखने में जनजातीय किसान मुख्य संरक्षक हैं।

जैव विविधता संरक्षण – मिलेट, दालें और देसी किस्में विलुप्त होने से बची हैं।



कम लागत-अधिक लाभ वाली खेती – सीमित संसाधनों में भी बेहतर उत्पादन।

पर्यावरणीय संतुलन – प्राकृतिक खेती से मिट्टी, जल, वायु प्रदूषण नहीं होता।

सामुदायिक कृषि परंपरा – सामूहिक श्रम व सहयोग से खेती का संचालन।

कृषि से जुड़े जनजातीय त्योहार और अनुष्ठान

जनजातीय कृषि संस्कृति में बोवाई से लेकर कटाई तक हर चरण से जुड़े विशेष पर्व होते हैं—

जनजातीय कृषि त्योहार

1. सरहुल (झारखंड, उरांव, मुंडा, हो जनजाति)

कब मनाया जाता है: चैत्र-वैशाख में क्यों मनाते हैं:

- साल (शोरिया रोबस्टा) पेड़ की नई पत्तियों का स्वागत
- नई कृषि चक्र की शुरुआत

विशेषताएँ:

- गाँव के सरना स्थल पर पूजा
- सामूहिक नृत्य और गीत
- फसल अच्छी होने की कामना

2. करमा पर्व (झारखंड, मध्य भारत की जनजातियाँ)

कब: भाद्रपद/आश्विन

महत्व:

- कृषि, पशुपालन और समृद्धि का पर्व
- कर्मा वृक्ष की पूजा

विशेषताएँ:

- युवक-युवतियों का करमा नृत्य
- अच्छी वर्षा और भरपूर उपज की प्रार्थना

3. नवाखाई (छत्तीसगढ़, उड़ीसा, झारखंड)

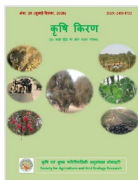
कब: भादो माह में

क्यों: नई फसल (धान) का पहला सेवन

विशेषताएँ:

- घर और देवताओं के सामने नई फसल चढ़ाना





- गाँव में सामूहिक भोजन

- फसल के प्रति आभार

4. जांटी पूजा / किसान पूजा (उड़ीसा, संथाल जनजाति)

कब: कृषि सीजन की शुरुआत पर
महत्व:

- जुताई-बोआई से पूर्व भूमि और हल-बैल की पूजा

विशेषताएँ:

- किसानों द्वारा खेतों में पूर्वजों का आशीर्वाद
- अच्छे मौसम, कीट-रोग से सुरक्षा की प्रार्थना

5. आमन/खारीहरि पर्व (गोंड व बैगा जनजाति)

कब: वर्षा ऋतु की शुरुआत में

महत्व:

- पहली बारिश का स्वागत
- खेती की शुरुआत

विशेषताएँ:

- बीज बोने से पहले बीजों की 'बीज पूजा'
- जल, जंगल, भूमि की प्रार्थना

6. मदई महोत्सव (छत्तीसगढ़ के गोंड जनजाति)

कब: कटाई के बाद

महत्व:

- फसल कटाई का उल्लास
- देवताओं की शोभायात्रा

विशेषताएँ:

- नृत्य-गीत

- सामूहिक भोज

- पशुधन और फसलों की सुरक्षा की प्रार्थना

7. इट्टु उथावो (झारखंड-मुंडा जनजाति)

कब: खरीफ कटाई के समय

महत्व:

- नया चावल देवताओं को अर्पित करना
- घर-परिवार की समृद्धि की प्रार्थना

8. बाली पर्व (ओडिशा-संथाल)

कब: फसल की तैयारी और बीज बोने के मौसम में

विशेषताएँ:

- महिलाओं द्वारा खेतों में समूह गीत
- धन-धान्य की कामना

9. बिंदे परब (उड़ीसा-लोढ़ा जनजाति)

कब: आद्र-श्रावण

महत्व:

- वर्षा और फसल वृद्धि के लिए पूजा

विशेषता:

- खेतों में बीज डालने से पहले मातृदेवी की पूजा

10. करह भाटा पर्व (छत्तीसगढ़-मुरिया जनजाति)

कब: कटाई के बाद

क्यों:

- अन्नदाता भूमि का आभार

विशेषताएँ:

- सामूहिक नृत्य
- नई फसल का सामूहिक भोग

जनजातीय कृषि संस्कृति संरक्षण की आवश्यकता क्यों?

वर्तमान समय की चुनौतियाँ-

- जलवायु परिवर्तन
- भूमि की उर्वरकता में गिरावट
- महंगे कृषि इनपुट
- रसायनों का अंधाधुंध उपयोग

इन समस्याओं का समाधान परंपरागत कृषि पद्धतियों में निहित है।

इसलिए इन्हें वैज्ञानिक आधार पर दस्तावेज़ित कर, प्रोत्साहन देकर, मुख्यधारा कृषि में शामिल करना आवश्यक है।

जनजातीय कृषि पर्यावरण संरक्षण का आधार

जनजातीय कृषि, खेती के प्रति एक समग्र दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करती है जो केवल उत्पादन से आगे बढ़कर प्रकृति के साथ सामंजस्य, मृदा स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण पर ज़ोर देती है। आदिवासी

समुदायों ने सदियों से सांस्कृतिक, पारिस्थितिक और कृषि ज्ञान का खजाना संजोया है, जिससे जैव विविधता



संरक्षण, प्राकृतिक संसाधन संरक्षण और खाद्य सुरक्षा में वृद्धि हुई है। पारंपरिक

कृषि पद्धतियाँ बहुआयामी लाभ प्रदान करती हैं, जिनमें बेहतर सामुदायिक स्वास्थ्य और पोषण, आजीविका सुरक्षा और पर्यावरण एवं सांस्कृतिक संरक्षण शामिल हैं।

जलवायु परिवर्तन, जनसंख्या वृद्धि और प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण जैसी समकालीन चुनौतियों के मद्देनजर, सतत खाद्य उत्पादन अत्यंत महत्वपूर्ण हो गया है। जनजातीय कृषि एक लचीली और टिकाऊ प्रणाली के रूप में उभर कर सामने आई है, जिसकी विशेषता पर्यावरण-अनुकूल पद्धतियाँ और जोखिम-न्यूनीकरण तकनीकें हैं। जैसे-जैसे दुनिया सतत कृषि की ओर तेज़ी से बढ़ रही है, हम भारत में पारंपरिक कृषि पद्धतियों के पुनरुद्धार को सक्रिय रूप से बढ़ावा और समर्थन दे रहे हैं।

सारांश

जनजातीय कृषि संस्कृति हमारी प्रकृति-केंद्रित कृषि की वास्तविक जड़ें हैं।

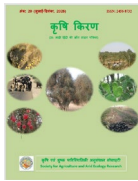
इनकी संरक्षित पारंपरिक खेती तकनीकें-

- सतत खेती
- पोषण सुरक्षा
- जैव विविधता
- जलवायु अनुकूल

कृषि

इन्हें पहचानना, संरक्षित

करना और आधुनिक कृषि से जोड़ना वर्तमान समय की जरूरत है।



जनजातीय कृषि संस्कृति केवल खेती का तरीका नहीं—

यह जीवन, प्रकृति, परंपरा और संतुलन का विज्ञान है।

आज जब दुनिया रसायन-मुक्त खेती और जलवायु सहनशील कृषि की ओर बढ़ रही है, तब जनजातीय समुदायों का ज्ञान भविष्य की कृषि के लिए दिशा दर्शक बन सकता है।